शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 दिसम्बर 2012

कालिदास के काव्य में वर्णित पौराणिक देववृक्ष पारिजात : प्रकरण और कथा

डॉ0 भूपेन्द्र हरदेनिया
शासकीय नेहरू डिग्री कालेज,
सबलगढ़, जिला मुरैना, मध्यप्रदेश

शोध संक्षेप

पिछले दो दशकों में पर्यावरण के क्षरण या नाश की चिन्ता और आकांक्षा के चलते वृक्ष और प्रकृति का मानव जीवन के साथ जो सम्बन्ध स्थापित किया गया, उसे केवल लाभ–हानि के व्यापारिक अथवा कोरे भौतिक संबंध में बदल दिया है। जब स्वयं मनुष्य का जीवन संकट में पड़ा तो प्रकृति के रक्षण और संवर्धन की उसे चिंता हुई अन्यथा यह संबंध, विकास के एक विचित्र स्वप्न को चरितार्थ करने तथा प्रकृति के असीमित क्रूर दोहन तक सीमित था। यह दोहन इस हद तक हुआ कि वृक्षों की कई प्रजातियां तो आज विलुप्त प्रायः हो गई हैं। भारतीय साहित्य में वृक्षों का महिमागान किया गया है। भगवद्गीता में तो भगवान् कृष्ण ने स्वयं को अश्वत्थ कहा है। महाकवि कालिदास का प्रकृति प्रेम तो अतुलनीय है। प्रस्तुत शोध पत्र में पारिजात वृक्ष पर प्रकाश डाला गया है।

यह तो सत्य है कि मनुष्य का पहला और स्थाई सम्पर्क प्रकृति से ही रहा है। एक तरह से मनुष्य भी प्रकृति का एक अनिवार्य हिस्सा है, और इस प्रकृति का अधिकांश हिस्सा वृक्षों से ही निर्मित है। वृक्ष तो धरती माता की हरी साड़ी है। प्राचीनकाल से वन–वृक्षों, फल–फूलों, पत्तियों का भारतीय पुराणों, परम्पराओं, लोककथाओं, लोकगीतों, वीर गाथाओं एवं साहित्य में अभिन्न अंग रहा है। विश्व में भारत एक मात्र ऐसा देश है जहां वृक्षों की पूजा की जाती है। प्राचीन संस्कृति के अनमोल ग्रंथों उपनिषदों की रचना वनों–जंगलों में हुई। जिनका उद्देश्य जन–जीवन की प्राण रक्षा के साधन–उपाय हैं। जिनमें वृक्षों ने देवत्व–दिव्यता प्राप्त की और जीव–जगत में घुलमिल गये।

पर्यावरण को संतुलित बनाये रखने में वृक्षों की महती भूमिका है। लोक में परोपकारी वृक्षों को धरती पुत्र कहा गया है पीपल के वृक्ष में सभी देवताओं का निवास माना जाता है। नीम के वृक्ष में भगवती दुर्गा रहती है। आंवले में महालक्ष्मी का वास है। तुलसी और बेल की धार्मिक मान्यताएं तो लोक के कण–कण में व्याप्त है। पर्यावरण सुरक्षा आज सम्पूर्ण भूमंडल के अस्तित्व का प्रश्न बन गया है। जरूरत है कि पर्यावरण पर गंभीरता से सोचा जाय।

मानव का प्रकृति के साथ गहरा सम्बन्ध रहा है। प्रकृति के साथ समन्वय से ही मानव कल्याण होता रहा है। जैसे मानव ने प्रकृति के साथ अत्याचार करना प्रारंभ किया, वैसे ही प्रकृति ने भी मानव को दुःखद परिस्थितियों में डालना शुरू कर दिया। प्रकृति के तत्त्वों में वन, प्राणी, धरा, पर्वत तथा सागर आदि सभी आते हैं। वनों का मानव जीवन में विशिष्ट महत्त्व है। वे प्राणवायु तो देते ही हैं साथ में वनोपजों से मानव को खाद्य पदार्थ, औषधियां तथा अन्य सुविधाएं प्रदत्त करते हैं।

शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 दिसम्बर 2012

वृक्षों के जीव–जगत में योगदान को लेकर सारे विश्व में एक तरह से वृक्षों के बारे में सबने अपने–अपने स्तर पर सोचना शुरू किया। सबने इनके महत्त्व को सोच समझकर उनके गुणों, विशेषताओं को स्वीकार करते हुए उनसे संबंधित लाभ तथा उपयोगिताओं को स्वीकारा। इतना ही नहीं जन–जन में वृक्षों के प्रति रूझान कथा, गाथा, गीत, कहानी, पूजा–अर्चना आदि माध्यमों से वृक्षों के महत्त्व को गढ़ दिया गया।

आज जब वृक्षों की बात की जाती है तो अनेक साधन हमारे पर्यावरण में वृक्षों की महत्ता का गान करते नजर आते हैं इसी तरह प्राचीन काल में पौराणिक संदर्भ को देखा जाय तो पुराणों में अनेक देववृक्षों का विवरण हमें दिखाई देता है, तथा महाकवि कालिदास ने अपने काव्य में इन देववृक्षों को अपने काव्य में सहेजा है, जिनका पर्यावरणीय दृष्टि से अत्यंत महत्व है। अमरकोश में देवतरू की संख्या पांच मानी है–

"पंचैते देवतरवो, मंदारः परिजातकः।
सन्तानः कल्पवृक्षश्च पुंसिवा हरिचन्दनम्।।"[1]

वस्तुतः पांच देवतरू प्रमुख रूप से माने जाते हैं– (1) मन्दार (2) पारिजातक (3) संन्तान (4) कल्पवृक्ष (5) हरिचन्दन । जिनका उल्लेख पुराणों में स्पष्ट रूप से मिलता है। महाकवि कालीदास अपने से प्रकृति को कभी अलग नहीं कर सके, वे प्रकृति के अनन्य उपासक थे, वे प्रकृति पुत्र थे। उन्होंने प्रकृति को अत्यन्त निकटता से देखा, परखा और समझा।

महाकवि कालिदास एक ऐसे रचनाकार थे जिन्होंने अपने काव्य के माध्यम से प्रकृति के सौन्दर्य को कलात्मक अभिव्यक्ति प्रदान की। उन्होंने प्रकृति को मानवीय भावनाओं से ओतप्रोत पाया। वैसे देखा जाए तो महाकवि कालिदास का समूचा साहित्य प्रकृति का श्रृंगार है। वहां वृक्ष–लताओं ने कहीं उपमेय तो कहीं उपमान रूप में स्थान पाया है। यही नहीं उनकी अभिराम नायिका तो स्वयं लता रूप ही है। वृक्षलता से झूमती वनराशि के विविध रूप मेघदूत और ऋतुसंहार में पाये जाते हैं।

महाकवि कालिदास ने अपने काव्य साहित्य में प्रकृति के अनेकों दृश्यों का अंकन किया है, तथा उन्होंने न जाने कितने वृक्ष, लता, पर्वत, प्रसूनों का वर्णन किया है। कवि ने अपने काव्य में अनेक देववृक्षों का उल्लेख कई स्थलों पर किया है। सामान्यतः सभी देववृक्षों को कल्पवृक्ष के नाम से जाना जाता है लेकिन वास्तव में इनके पांच प्रकार मन्दार, पारिजातक, संतान, कल्पवृक्ष, हरिचन्दन। जिनका उल्लेख अमरकोश में स्पष्ट है। महाकवि कालिदास ने जिस देववृक्ष का उल्लेख किया उनमें पारिजात प्रमुख है तथा जिसका प्रकरण एवं कथा इस प्रकार है–

पारिजात वृक्ष प्रकरण–

महाकवि कालिदास ने अपने साहित्य में जिन देवतरूओं का उल्लेख किया है उनमें से एक पारिजात भी है। पारिजात का अर्थ–समुद्र से उत्पन्न है। इस वृक्ष की उत्पत्ति समुद्र–मन्थन के समय समुद्र(पारी) से हुई थी इसलिए इस वृक्ष को 'पारिजात'[2] कहा गया।

यह वृक्ष देवताओं की प्रसन्नता के लिए देवराज इन्द्र को दिया गया था जो उनके 'नन्दनवन' नाम देवोद्यान में सदैव रहता था। देवतागण उसकी पूजा करते थे। वह दिव्य वृक्ष सदैव फूलने वाला, पवित्र गंध से सुवासित और परमोत्तम है। उसके पास जाने से पूर्वजन्म की बातों का स्मरण हो आता है। महाकवि कालिदास का भी मानना है

''कल्पवृक्षों में सबसे सुन्दर पारिजात ही है।''[3] कालिदास का मानना है कि इसकी ''मादक सुगन्ध चिन्ता और थकान को दूर करने वाली है।''[4] यह वृक्ष इन्द्र पत्नी को सदैव प्रिय है। प्रतिदिन पूजित होने पर वह अवश्य ही सौभाग्य की श्रीवृद्धि कराता है। ''इन पुष्पों की मालाएं भी गूंथी जाती थीं जो केशसज्जा के लिये किया जाता है।''[5] पारिजात के फूलों का प्रयोग शैया पर बिछाने के लिए भी किया जाता था।[6]

इस वृक्ष का निर्माण महर्षि कश्यप ने अपनी पत्नी अदिति के पुण्य कर्म के लिए मंदार वृक्ष का सार निकालकर किया था इसलिए यह सभी देववृक्षों में श्रेष्ठ माना जाता है।

वर्तमान समय में भी पारिजात के पेड़ पाये जाते हैं जिसे हरसिंगार या शेफालिका भी कहते हैं। यह एक छोटा सा वृक्ष है जिसमें केसरिया डंठलवाला श्वेत पुष्प होता है जो अत्यन्त सुन्दर–सुगन्धित और कोमल होता है। यह रात्रि में खिलता है और अपनी सुगन्ध बिखेरते हुए प्रातःकाल ही भू लुण्ठित हो जाता है। महाकवि कालिदास ने अपनी कृतियों में इसका उल्लेख अन्य नौ स्थानों पर किया है–
''

1. कल्पद्रुमाणामिव परिजातः
2. आविर्भूतमपां मध्ये पारिजातमिवापरम्
3. द्वितीय सखी भाच्याः पारिजातं शुभागिनी
4. पारिजातकुसुमैः प्रसाधयन्
5. स पारिजातोद्भवपुश्पमय्या स्रजा
6. तौ पारिजाप्रसवप्रसंगो मरुत्
7. किरीटकाटिच्युतपारिजातपुश्पात्करेणानि मतेन मूर्ध्ना
8. स पारिजात प्रसवस्रगाढयंम्
9. लुलितपारिजातशयनीये भवन्ति। ''[7]

पारिजात वृक्ष कथा–

हरणकथा–

एक बार श्रीकृष्ण अपनी 'पटरानी' रूक्मिणी के 'व्रतोद्यापन–समारोह' में रैवतक–पर्वत आ गये। उस उत्सव की समाप्ति पर देवर्षि नारद भी वहां आ गये। नारद जी पारिजात वृक्ष पुष्प लिये थे। उन्होंने वह पुष्प श्री कृष्ण को भेंट किया। श्रीकृष्ण ने वह पुष्प रूक्मिणी को दे दिया। रूक्मिणी ने उस पुष्प को अपने बालों में लगा लिया। इससे उनकी कान्ति और सुन्दरता द्विगुणित हो गयी। यह देखकर नारद जी ने उनकी प्रशंसा करते हुए कह दिया कि इस पुष्प के कारण रूक्मिणी अपनी सौतों से हजार गुना सुन्दर लगने लगी हैं।

वहां सत्यभामा की दासियॉ भी खड़ी थीं। उन्होंने द्वारका लौट कर सत्यभामा को सारी बात बता दी। इस बात से सत्यभामा रुष्ट होकर कोप भवन में पहुंच गईं।

जब श्रीकृष्ण सत्यभामा के महल पहुंचे तो उन्हें कोप भवन में देखकर चिंतित हुए। उन्होंने सत्यभामा के रोष का कारण जाना और उन्हें 'पारिजात वृक्ष' लाकर देने का वचन दे दिया।

श्रीकृष्ण ने इस कार्य के लिए देवर्षि नारद का स्मरण किया । जब नारद जी आ गये तो उन्होंने नारद जी को अपना दूत बनाकर देवराज इन्द्र के पास भेजा कि देवराज श्रीकृष्ण को अपना अनुज मानकर अपनी बहू सत्यभामा की प्रसन्नता के लिए पारिजात वृक्ष भिजवा दें। यदि वे ऐसा नहीं करेंगे तो श्रीकृष्ण पारिजात वृक्ष को बलपूर्वक छीन लायेंगे।

नारद से यह संदेश सुनकर देवराज इन्द्र ने श्रीकृष्ण को संन्देश भिजवाया कि पारिजात

वृक्ष देवताओं के उपभोग की वस्तु है, उसे मानव लोक में भेज देने पर मनुष्यों को अनायास ही स्वर्ग के सुख प्राप्त हो जायेंगे। फिर वे धर्म का त्याग कर देंगे और स्वर्ग की प्राप्ति के लिए भी सत्कर्म नहीं करेंगे।

लेकिन श्रीकृष्ण नहीं माने। तब नारद जी ने दुबारा जाकर इन्द्र को समझाया। इन्द्र ने भी न देने की हठ पकड़ ली। तब श्रीकृष्ण ने अमरावती पर आक्रमण करने की धमकी दी। इस पर इन्द्र ने देवगुरू बृहस्पति से सलाह ली। बृहस्पति जी ने क्षीरसागर के तट पर पहुंचकर इन्द्र के पिता कश्यप को सारी परिस्थिति से अवगत करा दिया। कश्यप जी ने इस समस्या का हल निकालने के लिए महादेव जी का आह्वान किया। महादेव शंकर ने युद्ध को अवश्यंभावी बाताते हुए सलाह दी कि कश्यप और अदिति स्वयं जाकर युद्ध को रोकें।

श्रीकृष्ण ने गरूड़ पर सवार होकर अमरावती पर आक्रमण कर दिया। इन्द्र और श्रीकृष्ण में घोर युद्ध हुआ। अन्त में अदिति और कश्यप ने पहुंचकर दोनों का समझाया और युद्ध रूकवा दिया। साथ ही शची के द्वारा सत्यभामा को 'पारिजात'[8] वृक्ष उपहार स्वरूप दिलवा दिया।

पुण्यक कथा–

पूर्वकाल में देवमाता अदिति ने अपने पति महातेजस्वी कश्यप मुनि को अपनी सेवा से सन्तुष्ट किया। जब तपोनिधि मरीचिनन्दन कश्यप ने उन्हें इच्छानुसार वर मांगने के लिए कहा। अदिति बोली–'मुनि श्रेष्ठ मुझे कोई ऐसी वस्तु दीजिये, जिससे मैं सदा–सौभाग्य शालिनी बनी रहूं। इच्छा होते ही समस्त आभूषणों से विभूषित हो जाऊं। तपोधन! मैं सदा कुमारी सी बनी रहूं। मुझे मनोवांच्छित गीत और नृत्य प्राप्त होता रहे और निर्मल, शोक रहित, पति भक्तिमती एवं धर्मशीला बनी रहूं।

तब मुनिवर कश्यप ने अदिति का प्रिय करने की इच्छा से 'पारिजात' की सृष्टि की जो सम्पूर्ण मनोवांच्छित वस्तुओं को देने में समर्थ और नित्य सुगन्धप्रद फूलों से भरा रहता है।

कश्यप जी ने मन्दार वृक्ष से भी 'सार' निकालकर इस वृक्ष का निर्माण किया था इसलिए यह तरूश्रेष्ठ समस्त देवतरूओं में उत्कृष्ठ माना जाता है।

अदिति ने पुण्य और सौभाग्य की वृद्धि के लिए कश्यप को पारिजात के निकट खड़ा किया, उनके गले में पुष्पमाला लपेटी और देवर्शि नारद के हाथ में कश्यप का हाथ पकड़ाकर उन्हें दान के रूप में दे दिया। तब नारद जी ने भी अदिति से 'निष्क्रिय' (मूल्य) लेकर कश्यप को वापस लौटा दिया। अर्थात् उन्हें 'दानरूप' से मुक्त कर दिया।

''इन्द्राणी शची, सोम पत्नी रोहिणी और कुबेर पत्नी ऋद्धि ने भी अपने–अपने पतियों का पारिजात के द्वारा इसी प्रकार से 'दान' किया था। श्रीकृष्ण को प्रिय पत्नी सत्यभामा ने भी इसी प्रकार का 'पुण्यक व्रत' (दान) किया था।''[9]

निष्कर्ष–

अंततः कहा जा सकता है कि देवतरू पारिजात को जिस प्रकार कालिदास ने महत्वपूर्ण माना है, उसी प्रकार उसका पौराणिक महत्व भी है। यहां कहने का आशय यही है कि वृक्ष चाहे कोई भी हो, लेकिन प्रकृति की दृष्टि से उसकी अत्यन्त महत्ता है। हमारे अर्वाचीन साहित्य में प्रकृति के अनेक उपादानों का प्रयोग प्रचुर मात्राा में हुआ है,

और प्रकृति के जिन उपादानों का सम्बन्ध मनुश्य से आता है, वह सब किसी न किसी साहित्य भरा पड़ा है। लेकिन वर्तमान संदर्भ में यदि कहा जाय तो बढ़ते शहरों ने वृक्षों की जगह बनाई, और प्राकृतिक आपदाओं को जन्म दिया, लगातार पानी की कमी होना, सूखे की स्थिति आना यह सब उसी छेड़छाड़ का परिणाम है। हम कितने ही सम्पन्न सबल और आत्मनिर्भर हो जायें किन्तु हमें अंततः जाना उसी छतनार छांह के आश्रय में होगा, रूप में पूजित हैं। पेड़–पौधों, फूल–पत्ते, लता–वृक्ष आदि उपादानों से हमारी भारतीय जो हमें भरपूर वर्षा, अन्न और जल देती है। जिसके बगैर मानव के विकास की सारी यात्राएं और सारे पड़ाव अधूरे हैं। आओ चलें उसी 'पारिजात' वृक्ष के तले जहॉ बैठकर पक्षी करें कलरव और खेले बच्चे छिपा–छाई, बहन–बेटियॉ झूला–झूलें और बड़े, बूढ़े करें कीर्तन, खूब बरसे मेघ और खेत हो हरे भरे।

संदर्भ

1. वृक्ष पुराण, महेश कुमार मिश्र 'मधुकर', संस्करण 2000, मध्यप्रदेश आदिवासी लोक कला परिशद, भोपाल, पृश्ठ संख्या 31
2. वही, पृष्ठ संख्या 37
3. कालिदास (शोध–पत्रिका), अंक 2005, कालिदास अकादमी मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद, उज्जैन, पृष्ठ संख्या, 56
4. वही, पृष्ठ संख्या 56
5. वही, पृष्ठ संख्या 56
6. वही, पृष्ठ संख्या 56
7. वही, पृष्ठ संख्या 55
8. हरिवंशपुराण–विष्णुपर्व। अध्याय 65–75
9. हरिवंशपुराण–विष्णुपर्व। अध्याय 67–श्लोक 58